इतिहास में शोध प्रविधि
(Research Methodology In History)

—डॉ. महेन्द्र कुमार उपाध्याय एवं नितेश उपाध्याय *
विभागाध्यक्ष, इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग,
ज0रा0दि0 विश्वविद्यालय, चित्रकूट (उ0प्र0)
*शोधार्थी, भारतीय भाषा केन्द्र, जे0एन0यू0, नई दिल्ली

सारांश

इतिहास का दृश्यमान मुख्य स्वरूप वास्तव में अनेक सूक्ष्म परिघटनाओं का समेकित रूप होता है। इतिहासकार एवं शोधार्थी इन्हीं सूक्ष्म तत्त्वों को उद्भासित कर इतिहास को समग्रता से देखने का प्रयास करता है। ऐतिहासिक विकास की यह प्रक्रिया निरन्तर गतिमान होती है। यह गतिशीलता नवीनतम ऐतिहासिक शोधों तथा ज्ञान के बदलते प्रतिमानों पर आधारित होती है।

शोध विद्यमान आँकड़े या अभी तक अज्ञात आँकड़े पर आधारित होता है। शोध का अर्थ मात्र नवीन अन्वेषण नहीं अपितु एक नवीन विन्यास, नवीन दृष्टिकोण और नवीन साक्ष्य भी है।

मुख्य शब्द— शब्दकोष सूचीपत्र, पुरालेख, मुद्राशास्त्र, ऐतिहासिक प्रबन्ध, सूची—पत्र।

शोध एक बौद्धिक जिज्ञासा है जो ज्ञान क्षितिज के विस्तार के लिए किसी विशेष क्षेत्र में किया जाता है। अध्येता अपनी रुचि/अभिरुचि के अनुसार किसी विषय में विशेष क्षेत्र का चयन कर सकता है। शोध का अर्थ मात्र नवीन आविष्कार या अन्वेषण नहीं अपितु एक नवीन विन्यास, एक नवीन दृष्टिकोण, एक नवीन साक्ष्य आदि भी है।

शोध विद्यमान ऑकड़े या अभी तक अज्ञात ऑकड़े पर आधारित होता है किन्तु यह हर हालत में मौलिक योजना की अपेक्षा करता है जो सैद्धान्तिक और काल्पनिक स्तर पर अद्वितीय होता है। दूसरे शब्दों में, शोध केवल अछूते विषय से ही सम्बन्धित नहीं होता, यह उस विषय को पेश करने से भी सम्बन्धित होता है जिसके बारे में मौलिक रूप से पहले कुछ काम कर लिया गया होता है। यह उन भूलों के सुधार, उसे उन्नत करने या उस विषय को नए ढंग से पेश करने से सम्बन्धित होता है।

भारत में शोध कार्य प्रायः स्नातकोत्तर के पश्चात आरम्भ किया जाता है। शोध कार्य अनेक कारणों से शुरु किया जाता है। प्रथम, इसके द्वारा पी—एच0डी0 (P-h.D.) की उपाधि प्राप्त की जाती है, जो सहायक आचार्य (व्याख्याता) पद की नियुक्ति में सहायक होती है। द्वितीय, शोध महज उपाधि प्राप्त करने के लिए की जाती है जिससे व्यक्ति की प्रतिष्ठा में वृद्धि होती है। तृतीय, स्नातकोत्तर के बाद जब कोई विद्यार्थी किसी नौकरी में नहीं लग पाता तो वह शोध—कार्य में जुट जाता है। चतुर्थ, कोई विद्यार्थी इसलिए शोध—कार्य करता है क्योंकि वह किसी विषय का गंभीर अध्ययन करना चाहता है। वस्तुतः उपर्युक्त तीनों कारण शोध—कार्य के मूलोद्देश्य को पूरा नहीं करते। केवल चतुर्थ कारण ही शोध—कार्य का मूल उद्देश्य है। इसके द्वारा ही कोई मौलिक कृति की रचना संभव है।

शोध कार्य हेतु अध्येता के सामने पहला प्रश्न शीर्षक अर्थात् विषय–चयन का उठता है। विषय चयन बहुत महत्वपूर्ण होता है जिस पर संपूर्ण शोध–कार्य केन्द्रित रहता है। अतएव शीर्षक का चयन अत्यन्त सावधानी से करना चाहिए। इसके लिए प्रायः अध्येता अपने मार्गदर्शक व प्राध्यापक का दरवाजा खटखटाता है। यह अच्छा है परन्तु पूर्णतः मार्गदर्शक पर आश्रित होना भी ठीक नहीं है। अध्येता को स्वयं अपने शोध–प्रबन्ध का विषय चुनना चाहिए। प्रायः उसे उसी विषय पर शोध कार्य करना चाहिए, जिसमें स्नातकोत्तर स्तर पर उसकी विशिष्टता रही है। इससे अध्येता का विषय ज्ञान विशिष्ट हो जाता है, उसमें उसकी दिलचस्पी बढ़ जाती है और अधिकारिक ढंग से उस विषय से सम्बन्धित प्रश्नों का उत्तर दे सकता है। द्वितीय, जब विषय का चयन कर लिया जाता है, तब शोधकर्ता के सामने दूसरा प्रश्न विषय सामग्री का उठता है। उसे इसकी पूरी जानकारी होनी चाहिए कि उसकी विषय सामग्री कहाँ–कहाँ मिलेगी? साथ ही विषय ऐसा होना चाहिए कि एक निश्चित समय में विषय सामग्री को ढूंढ़ा जा सके। दूसरे शब्दों में, विषय संतुलित होना चाहिए।

तृतीय, शोधकर्त्ता को अपने शोध–विषय की भाषा की जानकारी अवश्य होनी चाहिए। जैसे– यदि वह बौद्ध धर्म–दर्शन पर कार्य करना चाहता है तो पाली– संस्कृत, जैन धर्म–दर्शन पर कार्य करना चाहता है तो प्राकृत भाषा; अशोक महान पर कार्य करना चाहता है तो ब्राह्मी – खरोष्ठी आदि लिपियों की जानकारी होनी चाहिए। अर्थात् कभी–कभी एक से अधिक भाषाओं की जानकारी भी आवश्यक हो जाती है।

चतुर्थ, नए अध्येता को तुलनात्मक विषय का चयन नहीं करना चाहिए। इससे उसकी कठिनाई बढ़ जाती है। जैसे– **समुद्रगुप्त और नेपोलियन का तुलनात्मक अध्ययन** शोध प्रबन्ध का विषय उत्तम नहीं माना जा सकता। ऐसा करने पर अध्येता को पहले नेपोलियन और समुद्रगुप्त के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त करनी होगी। साथ ही उसे फ्रेंच, संस्कृत आदि भाषाओं की भी जानकारी होनी चाहिए। तुलनात्मक अध्ययन हेतु उन देशों के तत्कालीन प्रचलित आदर्शों व नैतिक मूल्यों के बारे में भी जानकारी होनी चाहिए।

पांचवां, अध्येता अपने विषय–चयन में विविध ऐतिहासिक पत्रिकाओं में प्रकाशित पुस्तकों के पुनरीक्षण और निबंधों की सूची से भी सहायता ले सकता है। इन पुनरीक्षणों और निबन्ध ग्रन्थ – संदर्भों में किसी समस्या के गुण–दोषों पर प्रकाश डाला जाता है। किसी विषय के और भी अध्ययन या शोध के लिए सुझाव दिये जाते हैं।

विषय चयन के पश्चात् विषय को विभिन्न अध्यायों (Chapters) में विभक्त किया जाता है। प्रायः पृष्ठभूमि और निष्कर्ष भी लिखे जाते हैं जिनकी गणना अलग अध्यायों में नहीं होती।

विषय चयन या निर्धारण के पश्चात् शोधकर्त्ता शोध सामग्री को इकठ्ठा करने (Spade Work) में लग जाता है। इसके लिए वह विभिन्न पुस्तकालयों, संग्रहालयों, अभिलेखागारों की दौड़ लगाता है। कहा जाता है कि अध्येता के लिए पुस्तकालय शोध प्रयोगशाला है, अतः इसका उचित और पूर्ण उपयोग होना चाहिए। कुछ विशेष ग्रंथ होते हैं, जो पुस्तकालय के उचित उपयोग का मार्गदर्शन करते हैं। इस संबंध में पुस्तकालय का सूची पत्र (Catalogue) अधिक महत्वपूर्ण है। इसमें पुस्तक का नाम, लेखक का नाम आदि लिखे होते हैं। इसके अतिरिक्त संगत जीवन गाथाएँ, विश्वकोष, ऐतिहासिक प्रबंध (Monographs), मानचित्र, ऐतिहासिक जीवन गाथाएँ आदि भी उपयोगी हैं।

सन्दर्भग्रंथ (Bibiliography)

सन्दर्भग्रन्थ ऑकड़े कार्ड या चिट्ठे पर क्रमबद्ध इकट्ठे किये जा सकते हैं। यथासंभव एक ही आकार के कार्ड का व्यवहार करना चाहिए। जब संदर्भ ग्रन्थ तैयार किया जाए तो पहले लेखक का नाम, इसके बाद पुस्तक का नाम, पुस्तक की कुल जिल्दें, प्रकाशन–स्थान एवं प्रकाशन वर्ष का उल्लेख करना चाहिए। पुस्तक के नाम को रेखांकित कर देना चाहिए जिसका अर्थ है कि मुद्रण के समय तिरछा टाइप किया जाएगा। उदाहरणार्थ– उपाध्याय, महेन्द्र कुमार; *चित्रकूट : ऐन आर्कियो रिलीजियस स्टडी,* कावेरी बुक्स, नई दिल्ली, 2014। इस ढंग से सन्दर्भ ग्रन्थ तैयार किया जाए तो शोध ग्रंथ के अंत में संदर्भ ग्रंथ जोड़ने में विशेष कठिनाई नहीं होगी। सन्दर्भ ग्रन्थ की तैयारी करने में अध्येता को पुस्तकालय की वर्गीकरण प्रणाली से परिचित होना चाहिए। प्रायः शब्दकोष सूचीपत्र (Dictionary Catalogue) प्रणाली का उपयोग किया जाता है जिसमें वर्णमालात्मक ढंग से दर्ज किया जाता है। संदर्भ ग्रन्थ को पूरा करने में सन्दर्भ ग्रंथों और पाद टिप्पणियों की सहायता ली जा सकती है। इसमें न केवल नए ग्रंथ बल्कि विविध पत्रिकाओं में निबन्ध, सामान्य पत्र की सामग्री, सरकारी दस्तावेजों आदि का भी हवाला रहता है।

ग्रन्थ और सरकारी दस्तावेजों के अतिरिक्त अध्येता को अपनी विषय सामग्री जुटाने में सर्वाधिक पत्र–पत्रिकाएँ बड़ी मदद पहुँचाती हैं। इनमें विद्वानों के निबन्ध प्रकाशित होते हैं। उपयुक्त सामग्री को ढूँढने में विलम्ब से बचने के लिए विषय सूची देखी जा सकती है। समाचार पत्र–पत्रिकाएँ आदि भी महत्वपूर्ण हैं। यह कहा जा सकता है कि संदर्भग्रंथ की तैयारी एक सतत प्रक्रिया है और यह शोधावधि तक बनी रहती है।

ऐतिहासिक स्रोत – (Historical Sources)

इतिहासकार ऐतिहासिक स्रोतों की सहायता से अतीत के इतिहास की संरचना करता है। इस हेतु साहित्यिक स्रोतों के साथ पुरातत्त्व (Archaeology), पुरालेख (Epigraphy) एवं मुद्राशास्त्र (Numismatics) समानरूप से उपयोगी है। अतः पुरातात्विक, साहित्यिक एवं विदेशी यात्रियों के विवरण वे स्रोत हैं जिनकी सहायता से इतिहास लिखा जाता है।

ऐतिहासिक स्रोतों को दो भागों में बांटा जाता है – प्रधान (Primary) और गौण (Secondary)। प्रधान स्रोतों में चश्मदीद गवाह के साक्ष्य, मौलिक दस्तावेज आदि आते हैं। इतिहासकार बिखरे हुए प्रधान स्रोतों को इकट्ठा कर उन्हें गौण स्रोत बना देता है। प्रधान स्रोत अधिक महत्व के हैं। गौण स्रोत उस व्यक्ति के साक्ष्य है जो घटना के समय उपस्थित नहीं रहे। संक्षेपतः, गौण स्रोत प्रधान स्रोतों पर आधारित हैं। प्रधान स्रोत में गौण ऑकड़े हो सकते हैं। उदाहरणार्थ – समाचार पत्र प्रधान स्रोत समझे जाते हैं किन्तु समाचार पत्रों द्वारा दी गई सभी खबरें प्रधान स्रोतों पर आधारित नहीं होती। उदाहरण स्वरूप, कुछ खबरें तो संवाददाताओं द्वारा भेंजी जाती हैं और कुछ सरकारी स्रोतों पर आधारित होती हैं।

पाद टिप्पणियों का उपयोग (Use of Footnotes)

पाद टिप्पणियों के उपयोग की कोई सर्वमान्य प्रणाली नहीं है किन्तु आजकल दो प्रणालियाँ सर्वमान्य हैं–एक मॉडर्न लैंग्वेज एसोसिएशन (MLA) और दूसरी शिकागो विश्वविद्यालय मैन्युएल की है। दोनों प्रणालियाँ उद्देश्य की पूर्ति करती हैं और अध्येता को आवश्यक सूचनाएँ मिल जाती हैं। जैसे–लेखकत्व, प्रकाशन का स्थान, प्रकाशन की तिथि आदि के बारे में जानकारी मिल जाती है।

पाद टिप्पणियाँ प्रथमतः, मूलपाठ में सूची अंको का प्रयोग मुद्रित पंक्तियों के थोड़ा ऊपर करना चाहिए। इसी तरह इन अंकों का प्रयोग पृष्ठ के दाहिने हासिए में पाद टिप्पणियों में करना चाहिए। द्वितीय, पाद टिप्पणियाँ प्रत्येक पृष्ठ के नीचे दी जाय या अध्याय के अन्त में दी जाय या पुस्तक के अंतिम पृष्ठों पर दी जाएँ। सामान्यतः पाद टिप्पणियाँ आजकल अध्याय के अन्त में दी जा रही हैं। अध्येता अपनी सुविधा के अनुसार प्रत्येक पृष्ठ के नीचे भी दे सकता है। तृतीय, उद्धरण के अन्त में पाद टिप्पणी की संख्या देनी चाहिए। जब एक ही वाक्य में एक से अधिक विशेषज्ञ के नाम आते हैं तो पाद टिप्पणी में प्रत्येक का नाम देना चाहिए तथा अर्द्ध विराम चिन्ह द्वारा दोनों को अलग–अलग करना चाहिए। पाद टिप्पणी में निम्नलिखित विन्दुओं पर ध्यान देना चाहिए :

1. पाद टिप्पणी में पहले लेखक का नाम दिया जाता है, इसके बाद उसकी पुस्तक का नाम जो तिरछे टाइप (Italics) या मुद्रित होता है, प्रकाशन स्थान का नाम, प्रकाशन का वर्ष तथा पुस्तक की पृष्ठ संख्या या संख्याओं का उल्लेख किया जाता है।
2. पाद टिप्पणियों में जिल्दों की संख्या रोमन संख्यावली में देनी चाहिए, पुस्तक या समाचार पत्र तिरछे टाइप हो, इसलिए उन्हें रेखांकित कर देना चाहिए, पृष्ठ संख्या अरबी अंक में और परिचयात्मक पृष्ठ रोमन संख्यावली में होना चाहिए।
3. पाद टिप्पणियों में लेखक का पूर्ण नाम पहले दिया जाता है तब उसके बाद उसका उपनाम दिया जाता है। उदाहरणस्वरूप पाद टिप्पणी में एस0के0 मेहता लिखा जाएगा, लेकिन संदर्भ ग्रंथ में मेहता, एस0के0 लिखा जाएगा।
4. यदि एक बार स्रोत के विवरण दे दिए गए हैं तो इसकी पुनरावृत्ति नहीं करना चाहिए। जैसे– यदि अगला उद्धरण उसी कृति या पुस्तक का है तो उसे 'वही' शब्द या लैटिन के इविडियम (Ibidem) या इविड (Ibid) शब्द का प्रयोग करना चाहिए। यहाँ यह ध्यान देना चाहिए, इविड शब्द का प्रयोग एक या दो पृष्ठ के बाद नहीं करना चाहिए। ऐसी दशा में लेखक का उपनाम देने से काम चल जाता है।
5. जब कोई कृति या पुस्तक उद्धृत कर दी जाती है और इस बीच अन्य बातों का उल्लेख करना पड़ता है और पुनः उस कृति या पुस्तक का उद्धरण देना पड़ता है तो ऑपशिट (Op. cit) शब्द का प्रयोग करना चाहिए। यह लैटिन शब्द ऑपेरा साइटेटो (Opera citato) है जिसका अर्थ है – उद्धृत कृति या पुस्तक से। ऐसी स्थिति में पुस्तक के स्रोत का नाम नहीं देना पड़ता है। लेकिन लेखक का नाम अवश्य देना चाहिए, तभी उसकी कृति या पुस्तक का अनुमान लगाया जा सकता है। प्रो0 हॉकेट (Hockett) का कहना है– ''आप शिट (Op. cit) का बार–बार प्रयोग पांडित्य प्रदर्शन करता है। इससे लघुपदों का प्रयोग बेहतर है।''
6. निबन्ध का उल्लेख एक बार कर देने के बाद यदि पुनः इसे लिखना है तो आप शिट (Op. cit) शब्द लिखना चाहिए। लेकिन इस उद्धरण के बाद अन्य उद्धरण आने से लोक शिट (Loc. Cit) शब्द का प्रयोग करना चाहिए। यह लैटिन शब्द लोको शायटेटो (Loco citato) है जिसका अर्थ 'उसी जगह उद्धृत' (In the same place cited) है। किन्तु, लोक शिट और ऑप शिट में लेखक का नाम अवश्य देना चाहिए।

7. यदि मूल दस्तावेज देखा गया है तो गौण स्रोत का उल्लेख नहीं करना चाहिए। समाचार पत्र का उद्धरण करते समय पृष्ठ संख्या देनी चाहिए। किन्तु प्रायः पृष्ठ संख्या नहीं देने का भी प्रचलन है। इसी तरह उच्च न्यायालय के निर्णय का उल्लेख मुकदमे के नाम और इसकी रिपोर्ट से किया जा सकता है। सरकारी रिपोर्टों का उल्लेख पुस्तकों की तरह ही करना चाहिए।

निष्कर्षतः हम प्रो0 गोटचाक के शब्दों में यह कह सकते हैं कि 'केवल संगत ऑकड़े ही पाद टिप्पणियों में दिए जाए और असंगत ऑकड़ों का बहिष्कार कर देना चाहिए।'

संदर्भ–ग्रन्थ

1. राय, कौलेश्वर : इतिहास दर्शन, किताब महल, 2018
2. हाकेट, एच0सी0 : द क्रिटिकल मेथड इन हिस्टोरिकल रिसर्च एण्ड राइटिंग।
3. गोटचाक, लुईस : अण्डरस्टैण्डिंग हिस्ट्री : ए प्रिमियर ऑफ हिस्टोरिकल मेथड।